

## कृत्रिम व अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ (हिन्दी)

भूत भविष्यत् वर्तमान की तीस चौबीसी में ध्याऊँ ।  
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन लोक के मन लाऊँ ॥  
ॐ ह्रीं त्रैलोक्य सम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोक सम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम  
चैत्याचैत्यालयेभ्य अर्घ्य नि.

वसुकोटि छप्पन लाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये ।  
शतच्यार पै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये ॥  
तिहुँलोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करें ।  
तिन भवन को हम अर्घ लेकै, पूजि है जग दुःख हरै ॥  
ॐ ह्रीं त्रैलोक्य सम्बन्ध्यष्टकोटि-षट्पंचाशल्लक्ष-सप्तनवतिसहस्र चतु  
शतैकाशीति अकृत्रिम-जिन चैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्य नि. ॥४॥

चैत्य भक्ति आलोचना चाहूँ, कायोत्सर्ग अघ नासन हेत ।  
कृत्रिमाकृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिन बिंब अनेक ॥  
चतुर्निकाय के देव जजैं, ले अष्ट द्रव्य निज कुटुम्ब समेत ।  
निज शक्ति अनुसार जजूं मैं, कर समाधि पाऊँ शिवखेत ॥

### पुण्यांजलि क्षेपण

पूर्व मध्य अपरान्ह की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार ।  
देव वन्दना करूँ भाव से, सकल कर्म की नासनहार ॥  
पंच महा गुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार ।  
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा मैं अब भव पार ॥  
(कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकार मंत्र की जाप्य करें।)

दरबार तुम्हारा मनहर है, प्रभु दर्शन कर हर्षिये हैं ।  
दरबार तुम्हारे आये हैं, दरबार तुम्हारे आये हैं ॥टेक॥  
भक्ति करेंगे चित से तुम्हारी, तृप्त भी होगी चाह हमारी ।  
भाव रहें नित उत्तम ऐसे, घट के पट में लाये हैं ॥दरबार. ॥१॥  
जिसने चिंतन किया तुम्हारा, मिला उसे संतोष सहारा ।  
शरणे जो भी आये हैं, निज आत्म को लख पाये हैं ॥दरबार. ॥२॥  
विनय यही है प्रभू हमारी, आत्म की महके फुलवारी ।  
अनुगामी हो तुम पद पावन, 'वृद्धि' चरण सिर नाये हैं ॥दरबार. ॥३॥

## अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ्य

(शार्दूलविक्रीडित)

कृत्रिमाकृत्रिम-चारु-चैत्य-निलयान् नित्यं त्रिलोकी-गतान्,  
वंदे भावनव्यन्तर-द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान् ।  
सद्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीपधूपैः फलै-  
द्रव्यैनीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये ॥१॥  
ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिम-चैत्यालयसंबन्धि-जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(उपजाति)

वर्षेषु-वर्षान्तर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु ।  
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम् ॥२॥

(मालिनी)

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,  
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानां ।  
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां,  
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥३॥

(शार्दूलविक्रीडित)

जंबू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र त्रये ये भवा-  
श्चन्द्रांभोज-शिखंडि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घनाभा जिनाः ।  
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मन्धनाः,  
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥४॥

(स्रग्धरा)

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजत-गिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे,  
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुंडले मानुषांके ।  
इष्वाकारे जनाद्रौ दधि-मुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,  
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भवन-महितले यानि चैत्यालयाणि ॥५॥

(शार्दूलविक्रीडित)

द्वौ कुंदेंदु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील-प्रभौ,  
द्वौ बंधूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ ।  
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभाः,  
ते संज्ञान-दिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः ॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबन्धि-कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।